खोया हुआ बच्चा

मुल्कराज आनंद

यह वसंतोत्सव था। संकरे रास्तों और गलियों की ठंडी छायाओं से ढेर सारे लोग चमकीले सजे-धजे बादलों की तरह निकल रहे थे। बाड़े से छूटे सफेद चमकते खरगोशों के मोटे-मोटे झुण्डों की मानिंद ये बादल बस्ती के बाहर चांदी-सी चमचमाहट वाले समंदर की ओर लपके जा रहे थे। उन्हें मेले में पहुंचने की जल्दी थी। कुछ पैदल भी थे और धीमे-धीमे सरक रहे थे। कुछ मानो घोड़े पर सवार थे और कुछ बांसों पर चढ़कर, तो कुछ बैलगाड़ियों में भरकर जा रहे थे। उन्हीं के बीच एक बच्चा अपने माता-पिता के पैरों के बीच से निकल कर भागा। जीवन और खुशी से लबालब भरा हुआ, वह बिल्कुल उस मुस्कुराती सुबह की तरह ही था, जो खुले दिल से सबको शुभकामनाएं देती हुई, फूलों व गीतों से भरे खेतों में आने का उन्मुक्त न्यौता दे रही थी।

"आओ, बेटे, इधर आओ", उसके मां-बाप ने उसे पुकारा। वह सड़क किनारे लगी

मुल्कराज आनंद - (1905-2004) जन्म पेशावर में हुआ था। वे प्रगतिशील लेखक संघ के संस्थापकों में से एक थे। लाहौर, लंदन, कैम्ब्रिज विश्व-विद्यालयों में पढ़ने के बाद वे बरसों इंग्लैंड में रहे। ज़िंदगी के आखिरी पचास साल उन्होंने पुणे के पास एक गांव में गुज़ारे।

मुल्कराज आनंद ने अपने लेखकीय सरोकार के रूप में भारतीय समाज के उन लोगों के वृतांत को स्थापित करने का प्रयास किया जो हाशिए पर बने हुए हैं।

दुकानों में सजे खिलौनों के मोह में बंधा हुआ था।

आवाज़ सुनकर बच्चा तेज़ी से अपने पालकों की ओर भागा। उसके पैर उनकी आवाज़ के आज्ञाकारी थे, लेकिन आंखें फिर भी पीछे छूटते खिलौनों में ही अटक गयी थीं। जैसे ही वो वहां पहुंचा, जहां उसके मां-बाप रुककर उसका इंतज़ार कर रहे थे, वो अपनी भीतर की इच्छा को दबा नहीं पाया। "मुझे वो खिलौना चाहिए", वो मचला।

पुरानी और ठंडी, घूरती हुई नज़रों में छिपे इन्कार को वो बखूबी जानता था। उसके पिता ने उसे सुपरिचित तानाशाह के से अंदाज़ में लाल-लाल आंखों से देखा। उसकी मां, जो उस सुबह की उन्मुक्त ताज़गी में पिघल गई थीं, नर्म थीं। अपनी उंगली बच्चे की ओर बढ़ाती वो बोली- "देखो बेटा, वहां तुम्हारे सामने क्या है!"

इच्छा पूरी न होने से हुई हल्की-सी निराशा और विषाद उसकी सिसकी भरी सांस में

दब भी नहीं पाई थी कि उसकी उत्सुक आंखों में सामने मौजूद नज़ारे की खुशी भर आई। वह आश्चर्य से बोला, "मां"। उन्होंने वह धूल भरा रास्ता छोड़ दिया था, जिस पर वे टेढ़े-मेढ़े घुमावों को पार कर उत्तर की ओर यहां तक चलते आए थे। अब वे एक खेत में पगडंडी पर उतर चुके थे। सामने खेत में फूली हुई सरसों लहलहा रही थी। ऐसा चमकीला पीलापन मानो पिघला सोना हो। यह पिघला सोना मीलों दूर तक समतल ज़मीन पर फैला हुआ था, एक पीली तरल रोशनी की नदी, जिसमें पागल हवा के हर बवंडर पर ज्वार-भाटे आ रहे थे। कहीं-कहीं वह पीली स्वर्ण नदी रास्ता भटक गई थी, वहां वह विशाल नदी की उपधाराओं जैसी नज़र आती। फिर भी वह दूर चमकीली रोशनी के एक समंदर की मरीचिका जैसी लगातार बहती जा रही थी। जहां यह विस्तार खत्म होता था, वहीं नीचे एक किनारे मिट्टी की दीवारों वाले घर खड़े हुए थे। वहीं नीचे पीले कपड़े पहने औरतों-आदमियों की भीड़ थी। वहां से मस्ती में डूबी उनकी सीटी बजाने की आवाज़ें, किकियाहटें, भिनभिनाहटें और ठहाके उठ रहे थे तथा उस विशाल उपवन के चारों तरफ फैले नीले आसमान को गुंजा रहे थे। लगता था जैसे शिव की उन्मत्त हंसी की अलौकिक व विलक्षण आवाज़ गूंज रही है। इस विशाल वैभव से चकित और

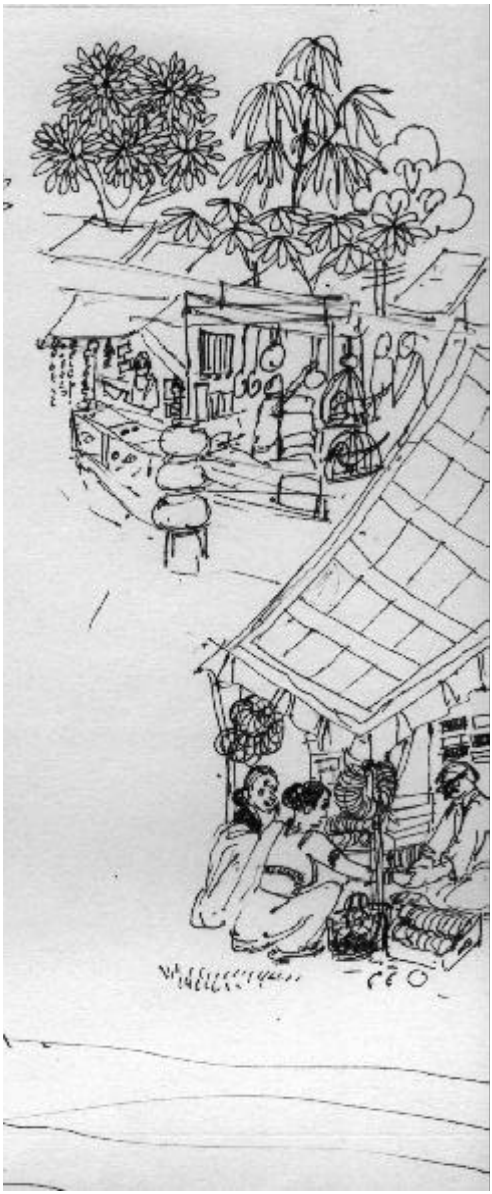

खुशी में बौराए किलकते बच्चे ने अपने मां-बाप की ओर निगाह उठाई और देखा कि उनके चेहरे भी इस शुद्ध सौंदर्य की दीप्ति के गवाह हैं। बच्चे ने पगडंडी छोड़ सीधे खेतों में गोता लगा दिया। वो नए घोड़े की तरह इठलाकर चल रहा था। उसके छोटे-छोटे कदम हवा के मनमौजी चकोरों के साथ लय में मिले हुए थे। हवा में, कहीं दूर खेतों-खलिहानों पर फटके जा रहे अन्न की गंध शामिल हो गई थी।

पतलैयों का एक दल अपने भड़कीले बैंगनी पंख फड़फड़ाता एक काले भौंरे या तितली की उड़ान रोक रहा था जिन्हें फूलों के दिल से मीठी खुशबू की तलाश थी। बच्चे ने अपनी नज़रों से हवा में उनका पीछा किया। उनमें से एक ने अपने पंख सिकोड़ लिए और नीचे बैठ गया। बच्चे ने उसे पकड़ना चाहा। उसके हाथ करीब-करीब उसे थामने ही वाले थे कि अचानक वह फड़फड़ाया, उछला और हवा में मंडराने लगा। एक काला भौंरा थोड़ा निडर था। बच्चे की पकड़ने की कोशिश से खुद को बचाकर वह उसे सताने के लिए कान के पास भुनभुनाने लगा। भौंरा बच्चे के होंठ पर बैठने ही वाला था कि बच्चे को मां की पुकार सुनाई दी।

"बेटे, आओ, चलो यहां आओ, रास्ते पर चलो...।"

बच्चा खुशी-खुशी अपने मां-बाप के पास चला और थोड़ी देर उनके साथ-साथ ही चलता रहा। लेकिन

जल्द ही, गुप्त जगहों से सुंदर-सुंदर कीड़े पूरे दल-बल के साथ निकल रहे थे। बच्चा उन्हें देखने में डूबा हुआ था।

"चलो बेटा, इधर आओ....आओ", उसके मां-बाप ने फिर उसे पुकारा। एक छांव वाली जगह ढूंढ वे कुएं की मुंडेर पर बैठ गए थे। बच्चा उनकी ओर दौड़ आया।

यहां की छांह बरगद के पेड़ ने बनाई थी। सुनहरे बरगद की मज़बूत बांहें खूब फले-फूले जामुन, नीम और चंपक के पेड़ों पर फैली थीं। सुनहरे अमलतास और किरमिजी रंग के गुलमोहर के फूलों से बने बिस्तर पर बरगद अपनी छाया किए हुए था, जैसी बूढ़ी दादी अपने नाती-पोतों और सभी छोटों पर अपनी छाया फैलाती है। रक्षाकवच के भीतर शर्माई हुई अधखिली कलियां सूरज के प्रति अपना उन्मुक्त प्रेम दिखा रही थीं, और उनके पराग से निकलने वाली मीठी खुशबू, मुलायम और ठंडी हवा के झोंकों के साथ मिलकर गमक रही थी जिसे बीच-बीच में कोई तेज़ झोंका और ऊपर तक उठाकर बिखेर देता था।

बच्चा जैसे ही उपवन में दाखिल हुआ, उस पर ढेर सारे फूल एक साथ झर गए। वो अपने मां-बाप को भूल अपने नन्हें-नन्हें हाथों में बरसती हुई पंखुरियां इकट्ठी करने लगा। तभी उसने फाख्तों की गुटरगूं सुनी और सुनते ही वो भागा अपने मां-बाप की तरफ, "फाख्ता-फाख्ता" वह चिल्लाता जा रहा था। इकट्ठी की हुई पंखुड़ियां संभालना उसके हाथ भूल गए थे और वो नीचे गिर गईं। मां-बाप ने बच्चे की ओर उत्सुकता से देखा। तभी एक कोयल ने एक प्यारी-सी धुन छेड़ दी जिसे सुनकर उनके मन की बेचैनी थोड़ी कम हुई।

"बेटे, यहां आओ", उन्होंने फिर बच्चे को पुकारा जो बरगद के पेड़ के चारों तरफ घूमता, कुलांचें भरता खेल रहा था। बच्चे को लेकर वे आगे चले। उन्होंने एक संकरी, घुमावदार पगडंडी पकड़ी जो सरसों के खेतों से गुज़रती आगे मेले तक जा रही थी।

जैसे-जैसे वे गांव के नज़दीक पहुंचे, बच्चे को ढेर सारी दूसरी पगडंडियां भी दिखाई दीं, जो भीड़ से भरी थीं। ये सब चक्कर खाती हुई मेले के भंवर में जाकर मिल रही थीं। जिस दुनिया में वो दाखिल होने जा रहा था, उसका यह भरमाता रूप उसे साथ मोहता हुआ और डराता-सा लगा।

एक मिठाई वाले ने हांक लगाई "गुलाबजामुन, रसगुल्ला, बर्फी, जलेबी।" मेले के भीतर घुसने की जगह के बिल्कुल नज़दीक ही था वो। उसकी आवाज़ सुनते ही उसके चारों तरफ ग्राहकों की भीड़ इकट्ठा होने लगी। मिठाई वाले ने रंग-बिरंगी मिठाइयों को सुनहरे और चांदी के वर्क से सजाकर उन्हें शिल्पकला के बेहतरीन नमूनों के तौर पर जमाया हुआ था। बच्चा आंखें फाड़कर मिठाइयों को देख रहा था और अपनी सबसे पसंदीदा मिठाई 'बर्फी' देखकर बुदबुदाया। लेकिन कहते वक्त ही वह करीब-करीब जानता था कि उस पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। उसके मां-बाप उसे लालची कहकर झिड़क देंगे। वो बिना जवाब का इंतज़ार किए आगे बढ़ गया।

एक आदमी एक लंबे डंडे पर खूब सारे लाल, पीले, हरे और जामुनी रंग के गुब्बारे बांधे खड़ा था। बच्चा सहज

ही उन रेशमी रंगों की इंद्रधनुषी आभा में बंध गया और उसके भीतर वे सारे के सारे गुब्बारे लेने की अदम्य इच्छा बहुत ज़ोर से उठी। लेकिन वो खूब जानता था कि उसके मां-बाप वो गुब्बारे नहीं खरीदेंगे क्योंकि, वो कहेंगे, कि अब तुम्हारी उम्र ऐसे खिलौनों से खेलने की नहीं रही। इसलिए वो आगे बढ़ गया।

एक बाज़ीगर टोकरी में कुंडली मारकर बैठे सांप को बीन सुना रहा था। सांप का फन राजहंस की गर्दन जैसा गर्वीली ऐंठन में उठा हुआ था। बीन का संगीत उसके अदृश्य कानों पर किसी झरने की मद्धिम कलकल की तरह गिरता महसूस हो रहा था। बच्चा बाज़ीगर के पास गया, लेकिन चूंकि वो अपने मां-बाप को जानता था इसलिए बाज़ीगर का देहाती संगीत छोड़ आगे बढ़ गया।

वहां आगे ज़ोर से चक्कर काटता एक गोल घेरे वाला झूला था, जिसमें औरतें आदमी और बच्चे पूरी तेज़ी से घूम रहे थे। सांप की तरह लहरदार घूमते, चीखते-चिल्लाते और चक्कर आने पर वे हंसते। बच्चा उन्हें गौर से देखता रहा। वे गोल-गोल घूम रहे थे। बच्चे के चेहरे पर एक मुस्कान आई। उसकी आंखें भी झूमते लोगों के साथ लहरदार घूम रही थीं। उसके होंठ विस्मय में आधे खुले रह गए थे कि अचानक उसने पाया कि वह खुद ही झूमते लोगों के घेरे में आ गया है। पहले तो वो गोल घेरा बहुत ज़ोर से घूमता रहा, फिर धीरे-धीरे उसके घूमने की रफतार कम हुई। बच्चा बिल्कुल तल्लीन हो उसे देखने में डूबा हुआ था, उसे पता ही नहीं था कि उसकी उंगली उसके मुंह में पहुंच चुकी थी। इस बार बच्चा झूले के घेरे को झूमता देखता रहा। इससे पहले कि वह अपने मां-बाप की आदत को समझते हुए अपनी इस इच्छा को भी दबा ले, बच्चे ने इस दफा थोड़ी ज़िद करते हुए अपनी इच्छा प्रकट की, "मां,

बाऊजी, मुझे उस घेरे में घूमना है, जाने दो न।"

कोई जवाब नहीं। वह पलटा। उसके मां-बाप वहां नहीं थे। उसके सामने भी नहीं। उसने अगल-बगल, आसपास देखा। वो वहां थे ही नहीं। उसने पीछे देखा। वहां भी वे नहीं थे।

उसके सूखे गले से पूरे ज़ोर की रुलाई फूटी और वो जहां खड़ा था, वहां से एकदम ज़ोर से भागा, उसका चेहरा रोने से और डर से लाल हो गया था - "मां, बाऊजी।"

उसकी आंखों से मोटे-मोटे आंसुओं की धार बह रही थी।

आतंकित-सा वो पहले एक तरफ भागा, फिर दूसरी तरफ, फिर पहले वाली तरफ, फिर दूसरी, फिर सभी दिशाओं में बावला-सा भागता रहा।

उसे नहीं पता था कि वो कहां जाए। बिल्कुल बारीक उसांस में बिलखते हुए वो फिर चिल्लाया, "मां, बाऊजी"। थूक निगलने से उसका गला गीला हो गया था। उसकी छोटी-सी पगड़ी खुल गई थी और उसके कपड़े धूल, मिट्टी और पसीने से भीग गए थे।

सब तरफ दौड़ चुकने के बाद वो हारा हुआ-सा खड़ा था। उसकी रुलाई अब सिसकियों में बदल चुकी थी। आंसू भरी आंखों से उसने पास में ही हरी घास में बैठी एक औरत और एक आदमी को देखा। वो बातें कर रहे थे। उसने पीले कपड़ों के उस झुंड में काफी गौर से देखने की कोशिश की, लेकिन उसे उसके मां-बाप जैसी कोई पहचानी सूरत नहीं दिखी। वहां ढेर सारे लोग थे जो हंस रहे थे और बोल रहे थे, सिर्फ हंसने-बोलने के लिए। वह फिर तेज़ी से दौड़ा, इस बार एक मज़ार की तरफ। वहां बहुत सारे लोगों की भीड़ लगी हुई थी। एक इंच भी जगह खाली नहीं थी, लेकिन वो लोगों के पैरों के बीच से अपने लिए जगह बनाता दौड़ता रहा, सुबकियों के बीच पुकारता रहा -

"मां, बाऊजी।" मज़ार के दरवाज़े के पास भीड़ बहुत ज़्यादा थी। बुरी तरह धक्का-मुक्की हो रही थी। मोटे-तगड़े आदमी, चमकती बड़ी-बड़ी आंखें, कातिलों जैसी और चौड़े कंधे। बेचारा बच्चा किसी तरह उनकी टांगों के बीच से रास्ता बनाता हुआ आगे बढ़ता ही जा रहा था, लेकिन फिर किसी की ठोकर लगी, फिर किसी की, इधर-उधर मोटे, वज़नी टापों जैसे पैरों की ठोकरें खाता, वो कुचलकर मर ही जाता, अगर वह पूरी ताकत से, पूरे ज़ोर से चीखा न होता, "मां, बाऊजी।" उस हिलोरे मारती भीड़ के समुद्र में एक शख्स ने बच्चे की चीख और कराह सुनी। बड़ी मुश्किल से झपट्टा मारकर उस शख्स ने बच्चे को निकाला और गोद में ले लिया।

"तुम यहां कहां से आए बेटा, किसके बच्चे हो?" भीड़ से बाहर लाते ही बच्चे की रुलाई ज़ोरों से फूट पड़ी। ज़ोर-ज़ोर से रोते हुए वो यही बोला, "मुझे मेरी मां, बाऊजी चाहिए।" आदमी ने उसे गोल घेरे में झूलते-घूमते लोगों के पास जाकर चुप कराने की कोशिश की। "क्या तुम इस घोड़े पर बैठोगे?" चक्करदार झूले के पास पहुंचकर उसने बच्चे को बहलाते हुए पूछा।

जैसे हज़ारों कमज़ोर सिसकियां बच्चे के गले में इकट्ठी हो गई हों, वो एकदम फट पड़ा और रोते-रोते चीखा, "मुझे मेरी मां चाहिए, मुझे मेरे बाऊजी चाहिए।"

अब वो शख्स उसे वहां ले चला जहां बाज़ीगर अभी भी बीन और नाचते सांप के खेल दिखा रहा था।

वो आदमी बच्चे से बोला, "सुनो बेटा, कितनी अच्छी बीन बज रही है।"

लेकिन बच्चे ने अपने कानों में उंगलियां ठूंस लीं और पहले से भी ज़ोर से चीखा, "मुझे मेरी मां चाहिए, मुझे मेरे बाऊजी चाहिए।"

वो आदमी उसे गुब्बारेवाले के पास ले गया कि रंग-बिरंगे गुब्बारे देखकर बच्चे का ध्यान भटक जाए और वो चुप हो जाए। "अच्छा, तुम एक सतरंगा फुग्गा लोगे?" आदमी ने उसे लुभाते हुए पूछा।

लेकिन बच्चे ने हवा में झूलते गुब्बारों से अपनी आंखें फेर लीं और सिसकते हुए बोला, "मुझे मेरी मां चाहिए, मुझे मेरे बाऊजी चाहिए।"

आदमी फिर भी बच्चे को खुश करने की कोशिशों से हारा नहीं था। वो उसे मेले के गेट के पास फूल वाले के पास लाया, "देखो, सुंदर-सुंदर फूलों से कितनी अच्छी खुशबू आ रही है। एक हार तुम अपने गले में डालोगे?"

बच्चे ने फूलों की टोकरी से अपना चेहरा घुमा लिया और सुबकता हुआ वही बोला, "मुझे मेरी मां चाहिए, मुझे मेरे बाऊजी चाहिए।"

बच्चे के चेहरे पर खुशी लाने के लिए उस आदमी ने उसे मिठाई खिलाने का सोचा और मिठाई वाले के पास ले आया, "कौन-सी मिठाई खाओगे बेटा?" बच्चे ने फिर अपना चेहरा दूसरी तरफ फेर लिया और सिसकी भर इतना ही कहा, "मुझे मेरी मां चाहिए, मुझे मेरे बाऊजी चाहिए।"

अनुवादः विनीत तिवारीः सामाजिक कार्यकर्ता, पत्रकार एवं संदर्भ दस्तावेज़ केन्द्र इंदौर से जुड़े हैं।

सभी चित्र : शोभा घारे, शौकिया चित्रकार हैं और भोपाल में रहती हैं।